ISSN 0973-8541, HUMANITIES AND DEVELOPMENT, VOL.18, NO.1, JAN-JUNE,2023 /27

प्राचीन शिक्षा–व्यवस्था में आधुनिक चुनौतियाँ : शिक्षा के सार्वभौमिकरण के संदर्भ में एक अध्ययन

*नेहा चौधरी एवं ** प्रो0 लाजो पाण्डेय
*शोध छात्रा एवं ** शोध पर्यवेक्षक
आर0आर0पी0जी0 कॉलेज, अमेठी
डॉ0 राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या

शोध सारांश :

वर्तमान प्राचीन समाज में सभी नागरिक शिक्षा प्राप्त नागरिक हों इसके लिए समाज और सामाजिक व्यवस्थाओं ने शिक्षा के विकास के लिए काफी प्रयास किए। वर्तमान में भी देश ने शिक्षा का स्तर सुधारने के लिए सरकार द्वारा सभी के लिए शिक्षा का लक्ष्य रखा गया है शिक्षा की अनिवार्यता के दृष्किोण से शिक्षा का सार्वभौमिकरण किया गया। देश में सार्वभौमिक शिक्षा के क्षेत्र में अत्यधिक उन्नति हुई है, परन्तु सार्वभौमिक शिक्षा ने गुण को क्षीण कर दिया है। वर्तमान समय में विश्व में वैज्ञानिक एवं प्राविधिक विकास की गति अत्यधिक तीव्र है। परन्तु भारत देश में इस दिशा में बहुत काम करने की आवश्यकता है। स्वतंत्रता के पश्चात् हमारा देश वैज्ञानिक विकसित हेतु कई कार्य हुए हैं। परन्तु अभी भी बहुत कुछ करना बाकी है। वैज्ञानिक एवं प्राविधिक विकास की दृष्टि से अभी तक अमेरिका, रूस, जर्मनी, जापान जैसे देशों के मुकाबले एक पिछड़े राष्ट्र हैं। अपनी इस कमी को पूरा करना हमारी शिक्षा का उद्देश्य है। हमारी शिक्षा–व्यवस्था की सबसे बड़ी चुनौती यह है कि हमारी प्राचीन से लेकर आधुनिक शिक्षा–पद्धति कमोवेश साहित्यिक रही है। प्रयोगात्मक कार्यों और कौषलताओं को महत्व कम दिया गया। पढ़–लिखकर भी छात्र बेरोजगार रहता है। शिक्षा हमारी उत्पादन क्षमता को नहीं बढ़ाती। बेरोजगारी की समस्या देश के सम्मुख विकट रूप धारण किये हुये हैं। इस समस्या को जहाँ और तरीकों से हल करना है, वहाँ इसका समाधान शिक्षा–पद्धति में मौलिक सुधार लाकर भी करना होगा। शिक्षा में कार्य अनुभव, व्यवसायिक आधार एवं उत्पादक क्षमता में भी यही माँग है। इसलिये हमारी शिक्षा का उद्देश्य है कि ऐसी शिक्षा 2 व्यवस्था का विकास करना जिसमें प्रत्येक व्यक्ति के लिये उपर्युक्त कार्य जुटाना। हमें अपने शैक्षिकसाधनों का सर्वाधिक उपयोग करना है। परन्तु शिक्षा में व्यर्थता व गतिरोध जैसी समस्याएँ हमारे साधनों का अपव्यय सिद्ध हो रही है। अतएव प्राचीन शिक्षा–व्यवस्था का अनुशीलन कर आधुनिक शिक्षा की इन कमियों में सुधार की आवष्यकता है। मुख्य शब्द : शिक्षा व्यवस्था, चुनौतियाँ, सार्वभौमिकरण।

प्रस्तावनाः–

शिक्षा ज्ञानार्जन और व्यवहारात्मक प्रक्रिया के रूप में समाज में प्राचीन काल से प्रवाहमान रही है। शिक्षा जहाँ एक ओर व्यक्ति के उत्कर्ष के लिए कार्य करती है तो दूसरी ओर समाज संस्कृति और राष्ट्र को विकास पथ पर अग्रसर करती है। वर्तमान शिक्षा के दो पक्ष हैं– 1. व्यक्ति का आचरण निर्माण जिसके द्वारा यह अपने वातावरण को समझ सके, उसके अनुरूप ढल सके और जीवन की आवश्यकताओं के अनुरूप वातावरण को ढाल भी सके। 2. शिक्षा द्वारा व्यक्ति की उत्पादन क्षमता का विकास हो। किसी यंत्र, मशीन, व्यापार एवं उद्योग पर किया गया पूंजीकरण कुछ लाभ प्रदान करता है उसी प्रकार व्यक्ति की शिक्षा पर किय गया व्यय भी आर्थिक दृष्टि से उपादेयता रखे। व्यक्ति का निजी

विकास शिक्षा का परमध्येय हो सकता है परंतु इसकी प्राप्ति का साधन है आर्थिक प्रगति। यह भी जरूरी है कि शिक्षित व्यक्ति की उत्पादन क्षमता अनपढ़ व्यक्ति से अधिक हो। यह भी ठीक है कि सब व्यक्तियों की क्षमता एवं सामर्थ्य समान नहीं होती। एक सा प्रशिक्षण प्राप्त दो व्यक्तियों की उत्पादन क्षमता भिन्न हो सकती है। इसमें वातावरण, जलवायु, अनुशासन एवं प्रोत्साहन के कारण भी अंतर हो सकता है। एक शिक्षित व्यक्ति प्रोत्साहित स्थिति में अपनी उत्पादन क्षमता में वृद्धि कर लेता है। परंतु अशिक्षित व्यक्ति, शिक्षा प्राप्त व्यक्ति की तुलना में सदैव हीन स्थिति में रहेगा। अनेक 3 अध्ययनों ने सिद्ध कर दिया है कि वह देश पिछड़ा, अविकसित एवं गरीब है, जिसके लोग शिक्षा के लाभों से वंचित रह गए हैं। किसी देश को विकास की सीढ़ी पर चढ़ने योग्य बनाने के लिए, देश के लोगों की शिक्षा अनिवार्य शर्त है। इसी कारण देश में शिक्षा के सार्वभौमिकरण हेतु केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा कई योजनाएँ (जैसे– जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम, सर्व शिक्षा अभियान, कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय योजना, राष्ट्रीय साक्षरता मिशन) प्रारम्भ की गई तथा इन योजनाओं पर सरकार द्वारा अत्यधिक व्यय किया गया। परन्तु जब तक देश में बेकारी विद्यमान है, शिक्षा पर होने वाला व्यय सार्थक नहीं रहता। प्राचीन से लेकर आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में ऐसी कई चुनौतियाँ व्याप्त है, जो शिक्षा के वास्तविक लक्ष्यों की प्राप्ति में बाधाकारक है। इसी कारण प्राचीन और आधुनिक शिक्षाएँ आत्म–निर्भरता, उत्तरदायित्व एवं प्रोत्साहन पैदा करने में असमर्थ है। इस दृष्टि से इसमें आमूल–चूल सुधार लाने चाहिए। शिक्षा द्वारा मनुष्य में अपनी आजीविका कमाने एवं अपनी आय बढ़ाने का सामर्थ्य विकसित होना चाहिए। शिक्षा तभी निवेश बनती है जब उसे भली प्रकार योजना–बद्ध किया जाये तथा पूंजीकरण का अधिकाधिक लाभ प्राप्त हो। भारत जैसे विकासशील देश के लिए शिक्षा पूंजीकरण के रूप में लाभकारी सिद्ध हो। देश की बेकारी को दूर करे एवं मानव–शक्ति के विकास की नई दिशाएँ खोजने में समर्थ हो। इसलिए देश की शिक्षा–व्यवस्था में व्याप्त चुनौतियों को पहचानने की आवश्यकता है। तभी देश में शिक्षा के सार्वभौमिकरण के वास्तविक लाभ प्राप्त होंगे। साहित्यावलोकनः– तिवारी, मृदुला (2007) ने प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों का अध्ययन किया। उक्त अध्ययन के निष्कर्ष में पाया गया कि बालकों के नामांकन एवं ठहराव पर लिंग, जाति, परिवार की आय, परिवार के आकार, विद्यालय के क्षेत्र एवं जिलेवार स्थिति एवं इनके बीच की अंतक्रिया का 4 सार्थक प्रभाव उसके नामांकन एवं ठहराव पर पड़ता है। अनुसंधानकर्ता ने उक्त अध्ययन जानकारी संकलन प्रपत्र, विद्यालय रिकार्ड एवं साक्षात्कार अनुसूची को उपकरण के रूप में प्रयोग करते हुए किया। कुमार, अवधेश (2009) ने वर्तमान प्राथमिक शिक्षा एवं दिशा पर अध्ययन किया। अध्ययन के परिणामों से निष्कर्ष प्राप्त हुए कि उत्तर प्रदेश में शिक्षा के सार्वभौमिकरण हेतु कई योजनाओं का संचालन हुआ है। इन योजनाओं के संचालन के पष्चात् विद्यालय में शिक्षकों की संख्या एवं छात्र–छात्राओं की नामांकन संख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई है तथा प्राथमिक स्कूलों की मूलभूत सुविधाओं में अत्यधिक सुधार हुआ है। परन्तु शिक्षा के विकास की गति बहुत धीमी रही है क्योंकि समय–समय पर निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति नहीं हो सकी है। इसके अतिरिक्त शिक्षा की गुणतत्ता भी संतोशजनक नहीं पायी गयी। गर्ग, अश्विनी (2009) ने प्रारंभिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण में सर्व शिक्षा अभियान कार्यक्रम के विभिन्न हस्तक्षेपों के प्रभाव का अध्ययन किया। अध्ययन के परिणामों से निष्कर्ष प्राप्त हुए कि सर्व शिक्षा अभियान के अंतर्गत शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लिये जहाँ सभी बस्तियों में निर्धारित मानदंडों के आधार पर विभिन्न शैक्षिकसुविधाएँ उपलब्ध कराई गई, वहीं बच्चों के नामांकन, ठहराव एवं गुणवत्तापरक शिक्षा हेतु विद्यालयों को पर्याप्त मात्रा में कक्षा–कक्ष, अतिरिक्त षिक्षक, स्वच्छ पीने का पानी, शौचालय, विद्यालय एवं शिक्षक अनुदान, नवाचार को प्रोत्साहन, विकलांग एवं सामाजिक, आर्थिक रूप से पिछड़े बच्चों के लिए विभिन्न प्रकार के प्रोत्साहन आदि दिये जा रहे हैं। इन विभिन्न हस्तक्षेपों से उत्तर प्रदेश में प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण की दिशा में काफी प्रगति हुई है। शारदा, जितेन्द्र (2017) ने शिक्षा

की समस्याओं पर अध्ययन किया। अध्ययन के परिणामों से ज्ञात हुआ कि शिक्षा स्कूलों एवं कॉलेजों के लिए उपयोगी सिद्ध नहीं 5 हो रही। इससे विद्यार्थियों में शिक्षा के प्रति असंतोष की भावना है। योग्य विद्यार्थी विश्वविद्यालयों, कॉलेजों में प्रवेष प्राप्त नहीं कर पाते, क्योंकि वे साधनहीन परिवार से सम्बन्ध रखते हैं तथा अयोग्य विद्यार्थी विश्वविद्यालयों, कॉलेजों में प्रवेष प्राप्त कर लेते हैं और फेल होने वाले विद्यार्थियों की संख्या में वृद्धि करते हैं। इस प्रकार देश का धन एवं प्रतिभा दोनों व्यर्थ हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त अध्ययन के अन्तर्गत देश में सार्वभौम शिक्षा के लक्ष्य प्राप्ति में व्यर्थता एवं गतिरोध की समस्या को प्रमुख कारण बताया गया है।

अध्ययन के उद्देश्यः–

1. शिक्षा–व्यवस्था में विद्यमान चुनौतियों का अध्ययन करना।
2. शिक्षा के सार्वभौमिकरण के मार्ग में व्याप्त कारणों का अध्ययन करना।
3. शिक्षा–व्यवस्था में विद्यमान चुनौतियों को दूर करने हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध पत्र का महत्वः–

वर्तमान समय में भारत की शिक्षा–व्यवस्था में कई चुनौतियाँ विद्यमान हैं, जो शिक्षा के सार्वभौमिकरण के मार्ग में बाधा उत्पन्न कर रहीं है। इन चुनौतियों को दूर किये बिना सार्वभौमिकरण का लक्ष्य प्राप्त करना संभव नहीं है। इसके अतिरिक्त विभिन्न अध्ययनों के निष्कर्षों से यह भी ज्ञात हुआ है कि शिक्षा के सार्वभौमिकरण की दिशा में अधिक प्रयास होने के कारण देश में शिक्षा की गुणवत्ता पर अधिक ध्यान नहीं दिया गया, इस कारण देश में शिक्षा की गुणवत्ता की स्थिति अत्यंत चिंताजनक है। अतः प्राचीन शिक्षा–व्यवस्था में विद्यमान इन चुनौतियों की पहचान करने हेतु यह शोधपत्र उपयोगी सिद्ध होगा तथा प्राचीन शिक्षा–व्यवस्था में विद्यमान इन चुनौतियों को दूर करने हेतु क्या–क्या उपाय किए जा सकते हैं, इस हेतु शोध पत्र में महत्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत किए जायेंगे।[6]

शिक्षा–व्यवस्था की प्रमुख चुनौतियाँः–

प्राचीन शिक्षा–व्यवस्था में कई चुनौतियाँ विद्यमान हैं तथा इनमें से कुछ प्रमुख चुनौतियाँ निम्नलिखित हैं–

सतत् मूल्यांकन का अभावः–

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में मूल्यांकन 'परीक्षा' का पर्यावाची बना हुआ है। परीक्षा का वर्तमान स्वरूप जिसे आवश्यक बुराई के रूप में स्वीकार किया गया है, एक अभिशाप से कम नहीं। देश के सारे शिक्षा–आयोगों ने इसमें समुचित सुधार की सिफारिश की है। शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति का सर्वांगीण विकास है। मूल्यांकन का उद्देश्य है परख करना, पथ–प्रदर्शन करना, ज्ञान प्राप्ति को प्रोत्साहन प्रदान करना, अध्यापक कार्यक्रम को प्रावैगिक बनाना। इस प्रकार शिक्षा एवं मूल्यांकन की प्रक्रियाएँ अन्योन्याश्रित हैं। परीक्षाएँ अध्ययन एवं परिश्रम के लिए प्रेरणाप्रद भी होती है। परीक्षा के दिनों में उदासीन छात्र भी पढ़ाई में जुट जाते हैं। परीक्षाओं का दूसरा लाभ है– शिक्षा का प्रजातंत्रीकरण। सामाजिक एवं आर्थिक स्तर की अवहेलना करते हुये छात्र को योग्यता की परख का समान अवसर प्रदान करती है। इसके साथ–साथ परीक्षाएँ प्रवेश की समस्या को भी नियंत्रित करती हैं। परंतु परीक्षा के वर्तमान स्वरूप से छात्र–वर्ग अत्यधिक असंतुष्ट हैं। परीक्षा पद्धति में सुधार की माँग जोर पकड़ती जा रही है। भारतवर्ष में परीक्षा में पास होने के लिए शैक्षणिक क्षमता की अपेक्षा भागय की अधिक जरूरत है। परीक्षा पद्धति रट्टेबाजी को प्रोत्साहन देती है, रचनात्मक प्रवृत्तियों का दमन करती है एवं

पूर्णतया एकांगी है। प्राचीन भारतीय शिक्षा में यह समस्या नहीं थी। शिक्षा हेतु कम बजटः–शिक्षा पर होने वाले व्यय को लोग एवं सरकारें फालतू खर्चे के तौर पर लेते हैं। शिक्षा विभाग खर्चीला विभाग होने के कारण सरकार की नजरों में उच्च स्थान 7 नहीं रखता। कमाई करने वाले विभागों– आयकर एवं उत्पादन विभाग, उद्योग, खनिज, बिजली, रेलवे, डाक विभाग महत्वपूर्ण हैं। शिक्षा तो पैसा माँगती है, देती क्या है? ऐसी धारणा है। परंतु शिक्षा भी एक प्रकार का निवेष है। इसमें लगायागया धन, देश को प्रतिभा–संपन्न बनाता है। जागरूक एवं सषक्त बनाता है। जिन देशों में शिक्षा पर जितना अधिक खर्च होता है, उतने ही वे देश विकासषील हैं। किसी भी देश का बहुमुखी विकास शिक्षा के विकास से जुड़ा होता है। आर्थिक विकास एवं प्राविधिक एवं वैज्ञानिक शिक्षा पर होने वाले व्यय के महत्व को समझना और भी जरूरी है। हमारे विशाल देश के लिए डॉक्टरों एवं इंजीनियरों की भारी जरूरत है। इंजीनियरिंग एवं डॉक्टरी की शिक्षा के लिए किया गया व्यय देश के विकास का लाजिमी अंग है। प्राचीन भारतीय शिक्षा में यह समस्या नहीं थी।

दोषपूर्ण पाठ्यक्रमः–

प्राचीन स्कूलों के पाठ्यक्रम में भी सुधार की जरूरत है। इस समस्या पाठ्यक्रम पुस्तक प्रदान है। बच्चों के लिए अवास्तविक वातावरण तैयार करता है। पाठ्यक्रम न तो रोचक है न प्रेरणाप्रद है। जीवन की वास्तविक विन तो रोचक है न प्रेरणाप्रद है। जीवन की वास्तविक क्रियाओं से बिल्कुल अलग बैठता है। पाठ्यक्रम में नियत विषय–वस्तु चुनी जाती है। कुछ विशेष सूचनाओं को इकट्ठा किया जाता है। उन्हें अलग–अलग विषयों के अंतर्गत रखा जाता है। श्रेणी के हिसाब से उसका वर्गीकरण कर दिया जाता है। यह बच्चों को थका देने वाला अव्यवहारिक बन जाता है। बालक की षारीरिक एवं मानसिक क्रियाशीलता के लिए कुछ भी उपलबध नहीं है। क्रिया–पद्धति द्वारा अध्ययन को प्रभावषाली एवं रोचक बनाया जाए। संगीत, कला, नाटक एवं अन्य हस्त–कार्यों की प्रदर्षनियाँ आयोजित की जाएँ ताकि रचनात्मक आत्माभिव्यक्ति के अवसर छात्रों को मिल सकें। स्वास्थ्य शिक्षा द्वारा छात्रों में अच्छी सेहत की आदतों का निर्माण होगा। शारीरिक शिक्षा एवं खेलों का भी 8 समुचित स्थान मिलना चाहिए। नैतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा को भी पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जाना चाहिए। छात्रों में सदाचार एवं सब धर्मों के प्रति सम्मान का भाव पैदा किया जाए। इसके साथ–साथ पाठ्य–विधियों में सुधार किये जाएं।

व्याख्यान और चाक की पुरानी विधि बदली जाए। प्राचीन भारतीय शिक्षा में यह समस्या नहीं थी।

व्यर्थता एवं गतिरोध की समस्याः–

शिक्षा के क्षेत्र में व्याप्त व्यर्थता एवं गतिरोध की समस्या शिक्षा पर किय` जाने वाले खर्चों की स्थिति को और भी तुच्छ बना देती है। व्यर्थता का भाव है, विद्यार्थीस्कूल में दाखिल होने के बाद स्कूल में न आएं। गतिरोध से अभिप्राय है विद्यार्थी सारा साल स्कूल में उपस्थित रहे परंतु क्लास में फेल हो जाएं। यह दोनों स्थितियाँ इतनी गंभीर हैं कि शिक्षा पर किए जाने वाले खर्चों को अर्थहीन बना देती हैं। देश में पिछड़े वर्ग एवं जातियों में शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार बहुत कम रहा है। ये वर्ग न केवल आर्थिक तौर पर अपितु सामाजिक तौर पर भी बहुत दबे और आतंकित रहे हैं। ऐसे वर्गों में शिक्षा के प्रसार के लिए विशेष सुविधायें एवं प्रयास वांछित हैं। प्राचीन भारतीय शिक्षा में यह समस्या नहीं थी।

शिक्षण में सुधार की आवष्यकताः–

शिक्षा के पढ़ाने के ढंगों में भी सुधार अपेक्षित है। हमारे स्कूलों में आज भी शारीरिक दंड पूरी तरह खत्म नहीं हुआ। कानूनी तौर पर इसका निशेध होने पर भी, अध्यापक वर्ग के मन से इस धारणा को निकालना बहुत जरूरी है। निरंतर विकासशील ज्ञान एवं विद्यार्थी वग के बीच समन्वय स्थापित करने के लिये एक संतुलित दृष्टिकोण की जरूरत है। विद्यार्थी का शिक्षण श्रेणीगत शिक्षा प्रणाली द्वारा

लाभकारी नहीं बन पाया। इसमें विद्यार्थी की निजी क्षमता एवं अध्यापक की शक्तियों का पूर्ण सदुपयोग संभव नहीं। वस्तुतः छात्र को अपनी योग्यता एवं गति के अनुसार 9 संपूर्ण वैयक्तिक एवं ज्ञानवर्धन का अवसर मिलना चाहिये। समाज तेजी से प्रगति कर रहा है परंतु हमारे स्कूल सदियों पुराने ढंग पर चल रहे हैं। हमारे स्कूलों में विज्ञान का शिक्षण प्रदान किया जाता है परंतु स्कूल वैज्ञानिक उपकरणों एवं विधियों से वंचित है। आज भी वही पुस्तक केन्द्रित एवं अध्यापक केन्द्रित पाठ्यविधि है। शिक्षा में विद्यार्थियों का योगदान शून्य के बराबर है। प्राचीन भारतीय शिक्षा में यह समस्या नहीं थी।

अध्यापकों की समस्यायें:—

स्कूल के सारे कार्यक्रमों की धुरी एवं निर्देशक है— 'अध्यापक'। यह सत्य है कि अध्यापक पर सारे शिक्षा के ढांचे का बोझ है। एक अध्यापक स्कूल में एक ही अध्यापकों को सारे विषयों का पाठ्यक्रम सारी क्लासों को पढ़ाने की जिम्मेदारी रहती है। कई स्कूलों में अध्यापक छात्र अनुपात 1:60 से भी अधिक होता है। परंतु देखने में आया है कि लगन वाले अध्यापक सारी कठिनाइयों का सामना करते हुये, अपनी जिम्मेदारियों को पूरी तरह निभा लेते हैं। परंतु देखने में आता है कि ऐसे अध्यापक प्रशासकों की नजरों में नहीं आते। गैर जिम्मेदार अध्यापक राजनीतिक हस्तक्षेप द्वारा शैक्षणिक ढाँचे को कमजोर बना देते हैं, जिससे समाज की हानि होती है। महिला अध्यापकों के लिये शहरों से दूर गाँवों में रहना एवं स्कूल को भली प्रकार चलाना और भी कठिन है। प्राचीन भारतीय शिक्षा में यह समस्या नहीं थी।

संसाधनों में असंतुलनः—

ग्रामीण क्षेत्रों के सरकारी स्कूलों में जहाँ एक ओर स्टाफ की कमी है, वहाँ शहरी क्षेत्रों के सरकारी स्कूलों में अधिक स्टाफ है। गाँव के पिछड़े इलाकों में काम करने वाले अध्यापक अपना सारा जीवन वहीं लगा देते हैं और एक विशिष्ट अध्यापक वर्ग शहरी स्कूलों में आराम से सब सुविधायें एवं भत्ते ले रहा है। जहाँ अध्यापक की जरूरत है, वहाँ अध्यापक होना चाहिये। अध्यापकों की समुचित स्थानों 10 पर नियुक्तियाँ शिक्षा में होने वाले अपार अपव्यय को रोक सकती हैं। कुछ स्कूलों में सामान की इतनी कमी है कि अध्यापकों को शैक्षणिक कार्यों में कठिनाई का सामना करना पड़ता है। कुछ स्कूलों में सामान इतना है कि रखने की समस्या है। प्राचीन भारतीय शिक्षा में यह समस्या नहीं थी।

स्वास्थ्य व खेलों के प्रति अरूचिः—

हमारे देश के विद्यालय विद्यार्थियों के स्वास्थ्य के प्रति सजग नहीं है। स्वास्थ्य की दृष्टि से पिछड़ा हुआ देश अपनी स्वाधीनता की रक्षा कैसे कर पायेगा। विद्यालयों में पढ़ने वाले विद्यार्थियों के स्वास्थ्य की जाँच की व्यवस्था विद्यालयों में उपलब्ध नहीं है। इसके अतिरिक्त विद्यालयों में प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी साधनों का भी अभाव है। विद्यालय में खेलों में भाग लेने वाले विद्यार्थी दूसरे दर्ज के विद्यार्थी गिने जाते हैं। विद्यालयों में खेल के मैदान नहीं हैं। विद्यालयों में खेलों हेतु प्रशिक्षक नहीं हैं। विद्यालयों में खेलों की उचित सुविधायें नहीं है व विद्यालयों की खेलों में रूचि भी नहीं है। प्राचीन भारतीय शिक्षा में यह समस्या नहीं थी।

जिज्ञासा का अभावः—

शिक्षा के विकास की मूल कड़ी है, 'जिज्ञासा'। जब तक विद्यार्थी के मन में जिज्ञासा है, शिक्षा को वह अनायास ही ग्रहण करेगा। परंतु हमारी शिक्षा—व्यवस्था, हमारे स्कूल, विद्यार्थी की जिज्ञासा को कुषाग्र करने की बजाय कुंठित कर देते हैं। विद्यार्थियों में सीखने की ललक नहीं है। आज की शिक्षा पद्धति के प्रारूप में विद्यालय एक कारखाने के समान है और विद्यार्थी उनसे निकलने वाले उत्पाद के समान है। विद्यार्थियों से यही अपेक्षा की जाती है कि उनके मस्तिष्क में जो डाल दिया गया, वांछित—अवांछित, उसे परीक्षा में बाहर निकाल सकें। यह शिक्षा के प्रति एक अत्यंत संकुचित मानसिकता है। प्राचीन भारतीय शिक्षा में यह समस्या नहीं थी। 11

विद्यालय में सामाजिक वातावरण का अभावः–

आज का स्कूल कल के समाज का छोटा प्रतिरूप है। जैसी भावी समाज की हम कल्पना करते हैं उसी के नमूने का सृजन हमें अपने विद्यालय में करना चाहिए। बदल रहे समाज की आवश्यकताओं को दृष्टि में रखते हुये हमें विद्यालय के वातावरण का निर्माण करना चाहिए। शिक्षा के माध्यम से ही वास्तविक प्रजातंत्र की स्थापना हो सकती है। जिस प्रकार का प्रजातंत्र हम देश में चाहते हैं उसी का लघु प्रतिरूप हमें अपनी पाठशालाओं में रचना होगा। आज के बालक ही भावी के निर्माता हैं। उन्हें जो वैचारिक आधार मिलेगा वही हमारे देश का भविष्य होगा। प्राचीन भारतीय शिक्षा में यह समस्या नहीं थी।

संकीर्ण राष्ट्रवादी धारणाएँः–

अंतर्राष्ट्रीयता की भावना का विकास 'शिक्षा' द्वारा ही सम्भव है। विश्व जनम का निर्माण भी शिक्षा द्वारा होगा। जरूरी है सारे राष्ट्रों के लोग शिक्षित हों। संकीर्ण राष्ट्रवादी धारणाओं को छोड़कर मानवमात्र के कल्याण की बात सोच सकें। शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े राष्ट्र विश्वशांति के लिये गंभीर खतरा बन सकते हैं। राष्ट्रों के बीच विचारों का एवं ज्ञान–विज्ञान का स्वतंत्र आदान–प्रदान होना चाहिए। इससे हम एक–दूसरे के दृष्टिकोण को भली प्रकार समझ सकते हैं। विश्व के देशों में आपसी संचार, व्यापार, यात्राएँ पारस्परिक सद्भावना को बढ़ावा देती है। इसलिए ऐसी शिक्षा–व्यवस्था बनाई जाए जो अंतर्राष्ट्रीय सद्भावना का विकास करे। देश के शिक्षार्थियों को विश्व नागरिकता के लिए तैयार करें। स्वतंत्रतापूर्वक सोचने की शक्ति का विकास हो। अच्छाई–बुराई का निर्णय करने की उनमें अपनी योग्यता विकसित हो। प्राचीन भारतीय शिक्षा में यह समस्या नहीं थी। 12

प्रौढ़ नागरिकों की शिक्षा–व्यवस्था में कमीः–

हमारा देश प्रजातांत्रिक देश है। प्रजातंत्र की सफलता की मुख्य शर्त है नागरिकों की शिक्षा। निरक्षरता को दूर करने के लिए दो मुहानों पर संघर्ष करना पड़ेगा। स्कूल आयु वर्ग के बच्चों के लिए शिक्षा का प्रबंध एवं प्रौढ़जन की शिक्षा की व्यवस्था करना। अब केवल मात्र निरक्षरता ही नहीं अपितु सामाजिक शिक्षा के स्वरूप का विकास किया जा रहा है। आत्मिक विकास के साथ–साथ उसमें सामाजिक योग्यता एवं दक्षता उत्पन्न करनी है। इस प्रकार प्रौढ़ शिक्षा को सामाजिक शिक्षा का अंग बना दिया गया है। सामाजिक शिक्षा साक्षरता के साथ–साथ मनोरजंन एवं नागरिक शिक्षा भी प्रदान करतीं है। देश को अपने आर्थिक विकास के लिए प्रशिक्षित लोगों की अधिक जरूरत है। सामाजिक शिक्षा इस लक्ष्य की पूर्ति में सहायक है। प्राचीन भारतीय शिक्षा में यह समस्या नहीं थी।

विशिष्ट शिक्षा के प्रति जागरूकता का अभावः–

विशेष आवश्यकता वाले बालकों के शिक्षण हेतु विद्यालयों में उचित व्यवस्थाएँ नहीं हैं। विद्यालयों में विशिष्ट बालकों को आवश्यक सामग्री जैसे–सुनने वाले यंत्र, साइकिल, चलने के लिए छड़ी, ब्रेल लिपी सामग्री आदि का वितरण नहीं किया जा रहा है। विद्यालयों में विशेष आवश्यकता वाले आलकों का चिकित्सीय परीक्षण हनी किया जाता है। विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराने एवं विद्यालय का वातावरण रूचिकर बनाने के लिए विद्यालयों के समस्त शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाने चाहिए। विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के परिवार में विषेश आवश्यकता वाले बच्चों के लिए चलाये जा रहे कार्यक्रमों के प्रति जानकारी का अभाव है। प्राचीन भारतीय शिक्षा में यह समस्या नहीं थी। 13

ग्रामीण नारी–समाज में शिक्षा के प्रति अरूचिः–

ग्रामीण नारी–समाज अत्यधिक पिछड़ा हुआ है। उनमें तो शिक्षा के प्रति अरूचि ही नहीं अपितु विद्रोह है। वे शिक्षा को अभिशाप मानती है। इस स्थिति में सुधार हेतु ग्रामीण क्षेत्रों में शैक्षिक प्रसार और महिलाओं के बेहतरी के लिए विशेष योजनाएँ बनाने और इनके प्रभावी क्रियान्वयन की आवश्यकता है।

महिला अध्यापकों की नियुक्ति ग्रामीण क्षेत्रों के विद्यालयों में की जानी चाहिए। ग्रामीण क्षेत्रों में सायंकालीन विद्यालय भी संचालित किये जाने चाहिए। जिससे ग्रामीण नारी–समाज स्वरोजगार की ओर उन्मुख हो एवं अपनी आर्थिक और सामाजिक स्थिति में सुधार कर सके। स्थिति में सुधार अवश्य आ रहा है परंतु मौलिक परिस्थितियाँ पूर्वतः विद्यमान हैं। प्राचीन भारतीय शिक्षा में यह समस्या नहीं थी।

शिक्षा की गुणवत्ता में गिरावटः–

हमारी शिक्षा का स्तर उत्तरोतर नीचे गिर रहा है। इस संदर्भ में विषेशकर प्राथमिक स्कूलों को दोषी ठहराया जा सकता है क्योंकि इस स्तर पर बच्चों की सर्वांगीण उन्नति के लिए पर्याप्त प्रयास नहीं किये जा रहे हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि जब तक नींव दृढ़ नहीं होगी, भवन भी अस्थिर ही रहेगा। इसलिए शिक्षा स्तर की नींव, जिसका आधार प्राथमिक स्तर पर ही निर्भर होता है, को सुदृढ़ बनाए बिना शिक्षा के अन्य स्तरों में सुधार लाना बहुत ही कठिन कार्य होगा। यद्यपि प्राथमिक शिक्षा में सुधार हेतु उठाए गये पग के फलस्वरूप देश में साक्षरता का प्रतिशत प्रति वर्ष बढ़ रहा है। स्कूलों, कॉलेजों में विद्यार्थियों की नामांकन संख्या बढ़ाने के लिए देश में निरंतर प्रयास किए जा रहे हैं, परंतु शिक्षा की गुणवत्ता पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। कई स्कूलों के दसवीं और बारहवीं कक्षा तक के बच्चे चौथी या पांचवीं कक्षा के स्तर का ज्ञान नहीं रखते। शिक्षा की गुणवत्ता की इस गिरावट के लिए स्कूली शिक्षा के ढाँचे में खामी तो एक बड़ा कारण है ही, लेकिन 14 इसके लिए ऐसे अभिभावक भी जिम्मेदार है जो यह चाहते हैं कि किसी भी तरह से उनका बच्चा पास हो जाए। प्राचीन भारतीय शिक्षा में यह समस्या नहीं थी।

महत्वपूर्ण सुझावः–

शिक्षा–व्यवस्था की चुनौयितों को निम्नलिखित सुझावों द्वारा दूर किया जा सकता है–

1. मूल्यांकन की प्रक्रिया शिक्षा की भांति अनवरत होनी चाहिए, ताकि मूल्यांकन द्वारा विद्यार्थियों की क्षमताओं को भली प्रकार परख सकें एवं विद्यार्थियों की समस्याओं का निदान कर सके।

2. शिक्षा पर होने वाले खर्च का लाभ उसी समय प्रकट नहीं होता अपितु भावी के गर्भ में निहित रहता है। अतः सरकार द्वारा हमारे देश में शिक्षा के विकास हेतु उचित बजट का निर्धारण करना चाहिए।

3. पाठ्यक्रम को सादा एवं लचीला बनाने की जरूरत है। अधिक विषय, अधिक पुस्तकें, अधिक कापियाँ, गरीब समाज के लिये जरूरी नहीं। पाठ्यक्रम का ` व्यवहार्य, जीवन सम्बन्धी एवं जीवन उपयोगी बनाकर ही हम ज्यादा बच्चों को स्कूल में रख सकते हैं। पाठ्यक्रम को विद्यार्थी की आवश्यकताओं के अनुरूप ढालना चाहिए।

4. स्कूल का समय लचीला होना चाहिए। जहाँ पर गरीब परिवारों के बच्चे दिन के समय नहीं पढ़ सकते वहाँ उनके लिए संध्या स्कूल लगाये जाने चाहिये।

5. स्कूल में बच्चों के प्रति प्रेम और प्यार का वातावरण उन्हें स्कूल में रखने का सर्वोपयुक्त साधन है। स्कूल के प्रति बच्चे का लगाव गहरा तभी होगा यदि उसका स्कूल जीवन का अनुभव आनंददायक होगा।

6. अध्यापक सारी कठिनाइयों का सामना करते हुये, अपनी जिम्मेदारियों को पूरी तरह निभा लेते हैं। थोड़े साधनों की शिकायत नहीं करते। अपने कर्तव्यों के 15 प्रति जागरूक रहते हैं। ऐसे अध्यापकों को समाज में पूरी तरह सम्मानित किया जाना चाहिए ताकि दूसरे अध्यापक भी उनसे प्रेरणा प्राप्त करें।

7. अध्यापकों की समुचित स्थानों पर नियुक्तियाँ होनी चाहिए तथा सरकार को विद्यालय हेतु शिक्षण सामग्री के वितरण पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

8. विद्यालयों में खेलों हेतु मैदान की व्यवस्था होनी चाहिए तथा छात्रों के स्वास्थ्य जाँच की व्यवस्था भी विद्यालय में होनी चाहिए।

9. शिक्षा हेतु विद्यार्थी के मन में अध्यापक को जिज्ञासा उत्पन्न करनी चाहिए। जब तक विद्यार्थी के मन में जिज्ञासा है, शिक्षा को वह अनायास ही ग्रहण करेगा।
10. शिक्षा के माध्यम से ही वास्तविक प्रजातंत्र की स्थापना हो सकती है। जिस प्रकार का प्रजातंत्र हम देश में चाहते हैं उसी का लघु प्रतिरूप हमें अपनी पाठशालाओं में रचना होगा।
11. विश्व के सारे राष्ट्र एक दूसरे पर आश्रित हैं एवं सबकी भलाई में ही हमारी भलाई है। अंतर्राष्ट्रीयता की भावना द्वारा ही देश का विकास सम्भव है। इसलिए विद्यार्थियों में अंतर्राष्ट्रीयता की भावना का विकास करना चाहिए।
12. प्रौढ़ नागरिकों को शिक्षित करने के साथ–साथ उसका शारीरिक, मानसिक, नैतिक विकास करना भी अपेक्षित होना चाहिए। उन्हें अपनी आजीविका कमाने योग्य बनाना है।
13. विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को उच्च गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराने एवं विद्यालय का वातावरण रूचिकर बनाने के लिए विद्यालयों के समस्त शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण कार्यत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराने एवं विद्यालय का वातावरण रूचिकर बनाने के लिए विद्यालयों के समस्त शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाने चाहिए। 16
14. विद्यालयों में रोजगारपरक तथा गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए। जिससे ग्रामीण नारी–समाज स्वरोजगार की ओर उन्मुख हो एवं अपनी आर्थिक और सामाजिक स्थिति में सुधार कर सके।
15. शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार हेतु प्राथमिक स्तर एवं अन्य स्तर पर पाठ्यक्रम, अध्यापन विधियाँ आदि में सतत् समयानुसार परिवर्तन की आवश्यकता है।

निष्कर्षः–

देश में शिक्षा के सार्वभौमिकरण हेतु तीव्र गति से प्रयास किए जा रहे हैं तथा समुचित शिक्षा जन–जन तक पहुँचे, यह सुनिश्चित करने का काम शिक्षा–व्यवस्था का है। एक उन्नत समाज और शक्तिशाली देश के निर्माण का सर्वप्रथम दायित्व शिक्षा–व्यवस्था का ही है। समस्याओं के निदान की कुंजी वस्तुतः शिक्षा–व्यवस्था के ही पास है, किंतु हमारी शिक्षा–व्यवस्था ही स्वयं तनावग्रस्त है। हमारी शिक्षा–व्यवस्था एक जटिल जाल में फंसी है, जिससे निकलना मुश्किल हो रहा है। उससे निकलने के लिए छोटे–मोटे सुधार पर्याप्त नहीं है, आमूल–चूल परिवर्तन चाहिए। इस भ्रमजाल में पड़े रहना कि हमारी शिक्षा–व्यवस्था अति उत्तम है, इसमें मात्र छोटे–मोटे सुधारों की ही आवश्यकता है, हमें मौलिक चिंतन से रोक देती है। आवश्यकता है हम मौलिक चिंतन करें, अपनी शिक्षा–व्यवस्था को पुनर्परिभाषित करें और आधारभूत ठोस कदम उठाएँ। सिर्फ आलोचना से और यथार्थ को नकारने से परिस्थितियाँ नहीं बदलती। शिक्षा के सार्वभौमिकरण का वास्तविक लाभ उस समय प्राप्त होगा, जब शिक्षा समाज में व्याप्त समस्याओं के समाधान का मार्ग प्रदान करें एवं जीवन में सामंजस्य लाए। व्यक्ति, समाज और देश के निर्माण का आधारभूत माध्यम शिक्षा ही है। हमारी शिक्षा–व्यवस्था ही हमें वैसा भविश्य दे सकती है, जैसा हम चाहते हैं। यद्यपि हमारी शिक्षा–व्यवस्था अधिकाधिक लोगों को साक्षर बनाने का अथक प्रयास कर रहीं है, व्यापक तौर पर शिक्षित वर्ग तैयार कर रही है, समाज और देश की 17 प्रगति में यथासंभव सहयोग करने के लिए प्रतिबद्ध और प्रयत्नशील है, तथापि अपने मूल उद्देश्य पर खरा क्यों नहीं उतर पा रही, यह एक गहन चिंतन का विषय है। शिक्षा–व्यवस्था का सर्वप्रमुख उद्देश्य है विद्यार्थियों का सवर्ङ्गीण विकास कर, योग्य और ज्ञानवान नागरिक देकर, समाज और देश के निर्माण में सहयोग करना। शिक्षा व्यवस्था के निर्माण की प्रक्रिया में चिंतन व्यापक होना चाहिए और सत्ता का प्रभाव सीमित। शिक्षा–व्यवस्था सत्ता–निरपेक्ष होनी चाहिए। जैसे न्याय विभाग सरकार से स्वतंत्र है वैसे ही शिक्षण विभाग भी सरकार से स्वतंत्र होना चाहिए। आवश्यक है हम व्यक्ति, समाज और देश के निर्माण के उद्देश्य को सामने रखकर शिक्षा–व्यवस्था पर गहन चिंतन करें और यह समझने का प्रयास

करें कि शिक्षा के मूलभूत उद्देश्यों को प्राप्त करने में हम असफल क्यों हो रहें। इसके लिए अथक प्रयास की आवश्यकता है तथा शिक्षा–व्यवस्था में व्याप्त इन चुनौतियों को दूर करने के पश्चात् शिक्षा के सार्वभौमिकरण के वास्तविक लाभ अवश्य प्राप्त होंगे तथा हम अपने लक्ष्य को अवश्य प्राप्त कर लेंगे।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. सिंह, सुनीता (2015), ''शिक्षा में नवीन प्रवृत्तियाँ एवं नवाचार'', अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा।
2. शर्मा, राजकुमारी (2006), ''प्राचीन शिक्षा और उसकी समस्याएँ'' राधा प्रकाशन, आगरा।
3. बन्ना, दीनानाथ (2014), ''प्राचीन शिक्षा का स्वरूप'', प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. मोहन, मदन (1994), ''प्रचीन शिक्षा का विकास और समस्याएँ'', कैलाश प्रकाशन, इलाहाबाद।
5. भटनागर, सुरेश (1996), ''आधुनिक प्राचीन शिक्षा और उसकी समस्याएँ'', सूर्या पब्लिकेशन्स, मेरठ।
6. त्यागी, गुरसरनदास (2015), ''प्राचीन शिक्षा का इतिहास एवं विकास'', अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा।
7. त्यागी, जी0एस0डी0 (1997), ''आधुनिक शिक्षा का विकास'', विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
8. तरूण, एच0 (2000), ''प्राचीन शिक्षा उसकी समस्याएँ तथा विश्व की शिक्षा प्रणालियाँ'', प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली।
9. पाठक, पी0डी0 (2007), ''प्राचीन शिक्षा और उसकी समस्याएँ'', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
10. पाण्डेय, रामशकल एवं करूणा शंकर मिश्र (2010), ''प्राचीन शिक्षा की सम–सामयिक समस्याएँ'', अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा। 19
11. किसलय, शरदेन्दु (2006), ''प्राचीन शिक्षा–नीति'', डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस'', नई दिल्ली।
12. कुमार, अभिषेक (2012), ''बुनियादी शिक्षा और समस्याएँ एवं सम्भावनाएँ'', के0के0 पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
13. कुमार, अशोक (1991),''करेंट ट्रैण्डस इन इंडियन एजूकेशन'',आशीष पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
14. आनंद, जी0 (2000), ''एजूकेशनल बेस्टेज'', कॉमनबेलथ पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
15. अग्रवाल, वी0वी0 (1997), ''आधुनिक प्राचीन शिक्षा की समस्याएँ'', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।